स्मारिका

55वां वार्षिकोत्सव | स्थापना–1952 ई०

मगध आर्टिस्ट्स

(मगध कलाकार)

पटना

द्वारा आयोजित

सेमिनार

'पारसी नाटक और आधुनिक हिन्दी नाटक'

15 जुलाई, 2007

समय : दिन में 2 बजे

स्थान-
ठाकुर प्रसाद कम्युनिटी हॉल,
किदवईपुरी, पटना-1

सम्पादक :
कुमार शांतरक्षित

बिहार राज्य सहकारी बैंक लि0, पटना-4

1914 से विश्वास का प्रतीक

दूरभाष सं०– 0612–2300324, 2300364, 2300222, 3298350, 3298351
फैक्स– 2300262

हमारी विशेषतायें :

1. 92 वर्षों से कृषकों एवं ग्राहकों की सतत् सेवा में समर्पित ।
2. राज्य की एकमात्र अनुसूचित सहकारी बैंक।
3. श्रोत का शत–प्रतिशत राज्य के विकास में निवेश।
4. सभी तरह के बैंकिंग व्यवसाय यथा जमा, कृषि एवं गैर कृषि ऋण, डिमांड ड्राफ्ट, लॉकर, बैंक गारंटी आदि की सुविधायें उपलब्ध।
5. बैंक की सभी शाखायें आधुनिकीकृत एवं कम्प्यूटरीकृत।
6. विभिन्न जमा योजना पर आकर्षक ब्याज की सुविधा।
7. समाज के विभिन्न वर्गों के लिए बहु–उद्देशीय वित्त पोषण की आकर्षक योजनायें।
8. भारतीय रिजर्व बैंक एवं बिहार सरकार के नियंत्रणाधीन कार्यरत।
9. राज्य के पैक्स / केन्द्रीय सहकारी बैंकों एवं शाखाओं के माध्यम से वृहत नेटवर्क।

उपर्युक्त सुविधायें हेतु हमारी निम्नलिखित किसी भी शाखा से सम्पर्क किया जा सकता है:–

हमारी शाखायें :

पटना– बांकीपुर, नया सचिवालय, न्यू मार्केट, कंकड़बाग, नाला रोड, मुसल्लहपुर हाट, मौर्यालोक

जमशेदपुर– विष्टुपुर, गोलमुरी एवं टेल्को

अन्य– रांची, बोकारो, मोतिहारी एवं बिहट

नई शाखाएँ– दरभंगा, छपरा

टी०पी० सिन्हा
प्रबन्ध निदेशक

सत्येन्द्र नारायण सिंह
अध्यक्ष

सचिव की कलम से

आज से लगभग 55 साल पहले, सन् 1952 ई0 में, 'मगध आर्टिस्ट्स' (मगध कलाकार) का जन्म बख्तियारपुर नामक नगरी में हुआ। इसका पहला ऐतिहासिक प्रदर्शन–'सिराजुद्दौला', बिहार शरीफ के कुमार पिक्चर हाउस में हुआ। दर्शकों की अपार भीड़ जुटी थी। प्रदर्शन से पूर्व 'हाउस फुल' का बोर्ड लगाना पड़ा। उसके बाद पटना के तबके में एकमात्र प्रेक्षागृह–लेडी स्टीफेंसन हॉल में 'कुंवर सिंह' नाटक का प्रदर्शन हुआ। सन् 1957 ई0 में इस संस्था ने दिल्ली के गणतंत्र दिवस परेड में 'प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय' की झांकी प्रस्तुत की जिसमें आठ देशों के बौद्ध विद्वानों ने भाग लिया।

संस्था द्वारा प्रस्तुत नाटक 'कलिंग विजय' देखने के लिए फिल्म के प्रख्यात अभिनेता पृथ्वीराज कपूर, पृथ्वी थियेटर्स के प्रमुख कलाकारों के साथ बख्तियारपुर गये थे। उनके लिए नाटक का आयोजन दिन में किया गया। इस नाटक से वे इतने प्रभावित हुए कि बम्बई जाकर भी वे बराबर पत्र लिखते रहे। नव नालन्दा महाविहार में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय स्तर के बौद्ध सम्मेलन में इस संस्था ने 'पाटलिपुत्र का राजकुमार' नाटक प्रस्तुत कर सभी को सम्मोहित कर दिया। सुप्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार डा0 ए0एल0 बाशम और विद्वान भिक्षु भदन्त आनन्द कौसल्यायन ने इस नाटक की भूरि–भूरि प्रशंसा की। प्रख्यात रंगकर्मी हबीब तनवीर ने 'मुद्राराक्षस' नाटक का उद्घाटन किया।

डॉ0 चतुर्भुज के अनुरोध पर तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर ने नाट्य प्रदर्शन को 'मनोरंजन कर' से मुक्त कर दिया। यह रंगकर्मियों के लिए एक बड़ी उपलब्धि रही। रोजी–रोटी से जोड़ने के लिए एल0एन0 मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा में एम0ए0 स्तर पर नाट्य शास्त्र की पढ़ाई प्रारम्भ कराना इस संस्था की उपलब्धियों में एक रही है। इस तरह हम धीरे–धीरे ही सही हिन्दी नाटक के प्रचार के प्रयास में सतत् प्रयत्नशील हैं।

पारसी नाटक का युग नाटकों का युग था। पारसी नाटक मंडलियाँ घूम–घूम कर प्रदर्शन करतीं और जनता को मनोरंजन प्रदान करतीं। आधुनिक हिन्दी नाटक पारसी नाटक का ऋणी है। आज भी पारसी नाटक के जो अनुभवी कलाकार हैं, वे हमसे कुछ कहना चाहते हैं। इस सेमिनार का यही प्रयोजन है कि हम उनकी बातें सुनें और आधुनिक हिन्दी नाटक को अपेक्षित गति दें।

उसी कड़ी में हम अपने 55वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर इस सेमिनार का आयोजन कर रहे हैं। यह भी हम बता दें कि वर्षों के शोध कार्य के उपरान्त डॉ0 चतुर्भुज–लिखित एक पुस्तक का प्रकाशन दिल्ली से शीघ्र हो रहा है जिसका शीर्षक है–'भारतीय और विदेशी भाषाओं के नाटकों का इतिहास।' यह पुस्तक रंगकर्मियों और दूसरे शोधार्थियों के लिए काफी उपयोगी होगी।

❖ ❖ ❖

–अशोक प्रियदर्शी

सचिव

सम्पर्क सूत्र :

मगध आर्टिस्ट्स (मगध कलाकार), 106, श्रीकृष्ण नगर, रोड–6, पटना–800001, बिहार

दूरभाष संख्या–0612–3209503 मोबाइल–9334525657

Website : www.chaturbhujdrama.com

श्रद्धांजलि

हम उन व्यक्तियों की पुण्य स्मृति को नमन करते हैं जिन्होंने अपने जीवनकाल में हमें मार्गदर्शन प्रदान किया, प्रदर्शनों में सहयोग देते रहे। आज वे स्वर्गलोक के वासी हो गए हैं। हम श्रद्धापूर्वक उनका नमन करते हैं।

पद्मश्री श्रीमती विन्ध्यवासिनी देवी :

ये पचास साल से अधिक समय तक संस्था की अध्यक्ष रहीं।
अन्तरराष्ट्रीय स्तर की लोकगीत कलाकार थीं।

भागवत प्रसाद श्रीवास्तव :

ये पचास साल से अधिक समय तक संस्था के जनरल सेक्रेटरी रहे।
अच्छे रंगमंच अभिनेता रहे।

अनन्त कुमार :

रंगमंच के कुशल निर्देशक और अभिनेता। पटना रेडियो के लोकप्रिय समाचार वाचक ।

मोहम्मद युनुस

रंगमंच की सेवा के उपरान्त फिल्मों में अभिनय किया।

भगवान प्रसाद

हंसराज सिंह

नरेन्द्र सिंह चौहान (कारू सिंह)

गंगा विष्णु

रमेशचन्द्र श्रीवास्तव (चुलबुल)

भगवान प्रसाद श्रीवास्तव

नूर फातिमा

अजय के0 सिन्हा

महावीर सिंह आज़ाद

दुर्गा देवी

'मगध कलाकार' (मगध आर्टिस्ट्स) की रंगयात्रा

कलकत्ता से प्रकाशित 'नाट्यवार्ता' पत्रिका के आधार पर

–मूल प्रस्तुतकर्त्री–प्रतिभा अग्रवाल

पटना से लगभग 45 कि0मी0 दूर गंगा के तट पर बसी बख्तियारपुर नगरी के रंगमंच का इतिहास बड़ा पुराना है। कई दशक पहले से इस नगरी में नाटक खेले जाते हैं। बीच में नाटक का जोश ठण्ढा पड़ गया। सन् 1952 ई0 में 'मगध कलाकार' (मगध आर्टिस्ट्स) नाम की नाट्य संस्था की नींव हिन्दी के सुप्रसिद्ध नाटककार–कलाकार श्री चतुर्भुज की प्रेरणा से पड़ी। कलाकारों ने संकल्प लिया कि इस संस्था में पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों के प्रदर्शन की प्रमुखता रहेगी। कारण, सामाजिक नाटकों का प्रदर्शन अन्य संस्थायें किया करती हैं, लेकिन पौराणिक–ऐतिहासिक नाटकों की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। यही पृष्ठभूमि थी 'मगध कलाकार' की स्थापना की, और मंचन–विषयक उसके संकल्प की।

संस्था ने सर्वप्रथम जून 1952 ई0 में चतुर्भुज लिखित ऐतिहासिक नाटक 'सिराजुद्दौला' का मंचन बिहार शरीफ के कुमार पिक्चर हाउस में किया। इस नाटक को देखने के लिए इस तरह भीड़ जुटी और टिकट बिके कि नाटक प्रारंभ होने के दो घंटे पहले 'हाउस फुल' का बोर्ड लगाना पड़ा। तब से बराबर इस संस्था का अभिनय होता रहा है। इसके बाद इसका दूसरा प्रदर्शन हुआ पटना के तब के एकमात्र प्रेक्षागृह लेडी स्टीफेन्सन हॉल में। नाटक 'कुँवर सिंह' था और शहर के काफी जाने–माने लोग नाटक देखने आये थे।

विश्वप्रसिद्ध नव नालन्दा महाविहार के भवन उद्घाटन के अवसर पर श्रीलंका, कम्बोडिया, थाईलैण्ड, लाओस आदि के बौद्ध विद्वानों के समक्ष इस संस्था ने 'कलिंग विजय' नाटक का प्रदर्शन किया। फ्रांस के बौद्ध विद्वान–भिक्षु आर्यदेव ने इस नाटक का उद्घाटन किया। इसके समाचार विदेशी पत्रों में भी छपे थे। सन् 1957 में दिल्ली के गणतन्त्र–दिवस समारोह में इस संस्था ने 'प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय' की झांकी प्रस्तुत कर, बिहार का प्रतिनिधित्व किया। उस झांकी में संस्था के सदस्यों के अलावा बर्मा, तिब्बत, कम्बोडिया, लाओस, थाईलैण्ड आदि आठ देशों के बौद्ध विद्वान भी सम्मिलित थे। उस अवसर पर संस्था के सदस्यों को राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद, प्रधानमंत्री पण्डित नेहरू, लेडी माउण्टबेटन आदि लोगों के सान्निध्य का सुअवसर मिला।

जब स्टेज और फिल्म के सुप्रसिद्ध कलाकार श्री पृथ्वीराज कपूर अपने थियेटर को लेकर बिहार आये, तब 'मगध कलाकार' संस्था के निदेशक श्री चतुर्भुज से बिहार के नाटकों के सम्बन्ध में उनकी बातचीत हुई और उन्होंने पटना के बाहर जाकर नाटक देखने की इच्छा प्रकट की। उनकी एवं उनके प्रमुख कलाकारों की सुविधा का ध्यान रखते हुए बख्तियारपुर के रेलवे रंगमंच पर 'कलिंग विजय' नाटक का मंचीकरण दिन में तीन बजे हुआ। संस्था के कलाकारों को उनका आशीर्वचन मिला। खुले रंगमंच पर कई हजार दर्शकों ने उनका स्वागत किया। बम्बई जाकर भी वे इस संस्था को भूले नहीं और पत्र लिखकर प्रेरणा देते रहे।

प्रथम भारत–पाक युद्ध के अवसर पर राष्ट्रीय सुरक्षा कोष हेतु धन–संग्रह के लिये पूर्वी रेलवे के अधिकारियों ने 'मगध कलाकार' के प्रदर्शन मुगलसराय, गया और दानापुर में आयोजित किये। इस अवसर पर 'मगध कलाकार' की ओर से चतुर्भुज–लिखित एवं निर्देशित ऐतिहासिक नाटक 'सिराजुद्दौला' का मंचन किया गया।

श्रीचन्द्र उदासीन कॉलेज, हिलसा के सहायतार्थ संस्था ने 'झांसी की रानी' और 'कर्ण' नाटकों का मंचन टिकट पर किया। 12 और 13 जुलाई 1971 को इण्डिया टोबैको कम्पनी ने रांची के समाज कल्याण केन्द्र के लिए 'झांसी की रानी' 'सिराजुद्दौला' नाटकों का प्रदर्शन संस्था द्वारा

कराया। सन् 1971 ई0 में ही सरकारी अधिकारियों के आग्रह पर झुमरीतिलैया, रामगढ़ और हजारीबाग के भरे सिनेमा हॉल में पूर्व कथित दो नाटक सफलतापूर्वक अभिनीत किये गये जिससे करीब तीस हजार रूपये 'मुख्यमंत्री सहायता कोष' में दिये गए।

1857 ई0 की घटनाओं पर आधारित ऐतिहासिक नाटक 'बहादुरशाह' रेल सप्ताह के अवसर पर आमन्त्रित दर्शकों के बीच बख्तियारपुर में अभिनीत किया गया। फिर गया के जिलाधिकारी के अनुरोध पर राष्ट्रीय सुरक्षा कोष के सहायतार्थ 'भीष्म प्रतिज्ञा' और 'झांसी की रानी' नाटक गया और नवादा के सिनेमा हॉल में अभिनीत किये गये। यह घटना जुलाई 1972 की है। उसी वर्ष जून में 'झांसी की रानी' नाटक पटना के रवीन्द्र भवन में मंचन कर इस नाट्य संस्था ने अपना बीसवाँ वार्षिकोत्सव मनाया।

1972 की दो अक्टूबर को जब देश भर में आजादी की रजत जयंती मनायी जा रही थी तो 'मगध कलाकार' ने पटना के रवीन्द्र भवन में ही 1857 के स्वाधीनता युद्ध पर आधारित नाटक 'बहादुरशाह' का प्रदर्शन किया जिसका उद्घाटन पटना हाईकोर्ट के न्यायाधीश श्री उँटवालिया ने किया।

सन् 1857 ई0 के स्वाधीनता संग्राम में 80 वर्षीय बाबू कुंवर सिंह ने बिहार का नेतृत्व किया था और आजमगढ़ तक के क्षेत्र को अपने कब्जे में किया था। कुंवर सिंह बिहार के भोजपुर जिलान्तर्गत जगदीशपुर के जमींदार थे। उनके भग्न दुर्ग से सटे खुले मंच पर कुंवर सिंह जयन्ती के अवसर पर 23 अप्रैल 1973 को चतुर्भुज लिखित एवं निर्देशित नाटक 'कुंवर सिंह' का मंचन किया गया। दर्शकों की संख्या 25 हजार से अधिक ही होगी। उसी अवसर पर 'कुंवर सिंह' और 'झांसी की रानी' नाटकों का मंचन बक्सर और आरा के सिनेमा हॉल में भी हुआ।

1974 में पूर्वी रेलवे दानापुर प्रमण्डल के अधिकारियों के अनुरोध पर 25 अगस्त से 1 सितम्बर तक दानापुर, मुगलसराय (उत्तरप्रदेश), गया और झाझा के सिनेमा हॉलों में आठ दिनों के लगातार मंचन का कार्यक्रम आयोजित हुआ। टिकट से प्राप्त आय की पूरी राशि एक महिला कॉलेज के विकास के लिये दे दी गयी।

सन् 1975 की पटना की भीषण बाढ़ से इस संस्था को काफी क्षति पहुँची। लगा, अब संस्था बैठ जायेगी। लेकिन कलाकारों ने प्रकृति की इस चुनौती को स्वीकार किया। नये जोश से दो नाटकों का रिहर्सल प्रारम्भ हुआ। वे नाटक थे 'नूरजहाँ' और 'कुंवर सिंह'। इन नाटकों का मंचन दानापुर, मुगलसराय और गया के सिनेमा हॉलों में लगातार छः दिनों तक बाढ़ सहायता कोष के लिए आयोजित किया गया। बिहार के राज्यपाल श्री आर0डी0 भण्डारे ने कार्यक्रम का उद्घाटन किया।

मुंगेर जिला के सबडिविजनल मुख्यालय जमूई में इस संस्था द्वारा स्थानीय सिनेमा हॉल में शहरी और ग्रामीण जनता के लाभार्थ लगातार चार दिनों तक 'कुंवर सिंह', 'झांसी की रानी' और 'पाटलिपुत्र का राजकुमार' नाटकों का मंचन हुआ। टिकट से प्राप्त आय जमूई में एक स्टेडियम बनाने के लिये दी गई।

फरवरी 1977 में नव नालन्दा महाविहार द्वारा आयोजित दीक्षान्त समारोह में देश-विदेश के अनेक विद्वान जुटे थे। उस अवसर पर 'पाटलिपुत्र का राजकुमार' नाटक मंचित हुआ। यह नाटक बौद्ध साहित्य के अध्येता और नाटककार श्री चतुर्भुज की बहुचर्चित रचना है जो प्रसिद्ध बौद्ध ग्रन्थ 'दिव्यावदान' की एक कथा पर आधारित है। इंग्लैण्ड के भाषाविद् और भारतीय इतिहास के प्रोफेसर डा0 ए0एल0 बाशम शुरू से अन्त तक नाटक में उपस्थित थे और उन्होंने अभिनय की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस संस्था ने अपने जीवन के 25 वर्ष पूरे करने पर जुलाई 1977 में पटना के रवीन्द्र भवन में रजत जयन्ती मनाई जिसका उद्घाटन बिहार के राज्यपाल श्री जगन्नाथ कौशल ने तथा समापन पटना हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश श्री के0बी0एन0 सिंह ने किया। उस अवसर पर संस्था की ओर से-शकुन्तला (हिन्दी में) और 'दि रानी ऑफ़ झांसी' (अंग्रेजी में)-दो नाटकों का मंचन किया गया। इस संस्था के सदस्यों ने ग्रामीण अंचलों में जाकर नाटक करने की प्रेरणा दी है और

यह इसके प्रयास का फल है कि बिहार के ग्रामीण अंचलों में अनेक क्लब प्रकाश में आये हैं और वे इस संस्था से नाटक के मंचन में राय मशविरा लिया करते हैं। ग्रामीण अंचलों में नाटक का आन्दोलन चलाना इस संस्था की सबसे बड़ी उपलब्धि है। बिहार में शायद ही कोई ऐसा ग्रामीण या शहरी अंचल है जहाँ चतुर्भुज के नाटक अभिनीत नहीं किये गये हों।

पुराने संस्कृत नाटकों का मंचन आधुनिक रंगमंच के अनुरूप बना कर किया जा सकता है। इसको ध्यान में रखकर पांचवीं–छठी शताब्दी के प्रसिद्ध नाटककार विशाखदत्त–रचित संस्कृत नाटक 'मुद्राराक्षस' सहज–सरल हिन्दी भाषा में रूपान्तरित चतुर्भुज ने किया और भगवान प्रसाद के निर्देशन में, पटना के एक प्रेक्षागृह में इसका मंचन हुआ। प्रसिद्ध रंगकर्मी हबीब तनवीर ने इसका उद्‌घाटन किया। चाणक्य की भूमिका के लिए संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा, के कुलपति ने भगवान प्रसाद को महाराजा कामेश्वर सिंह पुरस्कार से सम्मानित किया। यह नाटक 1979 ई० में हुआ।

राष्ट्रीय एकता, साम्प्रदायिक सद्‌भाव तथा पटना के स्वाधीनता–सेनानी के जीवन पर आधारित चतुर्भुज लिखित और अजय के० सिन्हा–निर्देशित नाटक 'पीरअली' का मंचन सन् 1980 में भारतीय नृत्यकला मन्दिर में हुआ।

सरकारी स्तर पर पटना के गाँधी मैदान में गणतन्त्र दिवस–समारोह पर झांकियों का प्रदर्शन पुनः 1979 ई० से चला। 'मगध कलाकार' की ओर से 1979 ई० में 'कुंवर सिंह' और 1980 ई० में 'शेरशाह' की झांकी निकाली गयी।

1980 के बाद से 'मगध कलाकार'–परिवार को काफी उतार–चढ़ाव का सामना करना पड़ा। सन् 1990 में नयी युवा–प्रतिभाओं को लेकर एक बार पुनः पटना में 'झांसी की रानी' का मंचन कर 'मगध कलाकार' ने ऐतिहासिक नाट्य मंचन की शुरूआत की। इस नाटक की मुख्य विशेषता यह थी कि दो पीढ़ी के कलाकारगण एक साथ मंच पर आये।

21–22 मई 1992 को संस्था ने चालीसवें वार्षिकोत्सव के अवसर पर चतुर्भुज लिखित हास्य–व्यंग्य नाटक 'बाबू विरंची लाल' प्रस्तुत किया। निर्देशक थे–अशोक प्रियदर्शी।

बिहार के नाट्य प्रदर्शन में 'मनोरंजन कर' नागपाश की तरह था। संस्थायें टिकट नहीं बेच पाती थीं। यह 'मगध कलाकार' के निर्देशक–संस्थापक का अनवरत प्रयास था कि तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर ने अमेच्यर नाट्य संस्थाओं को 'मनोरंजन कर' से मुक्त कर दिया। इससे नाट्य प्रदर्शन को बड़ा बल मिला। इसकी सूचना 'बिहार गजट' के 7–2–1978 के अंक में प्रकाशित हुई है।

रंगकर्मियों की संख्या दिन–ब–दिन बढ़ रही है। लेकिन रंगकर्म को रोजी–रोटी से अभी तक जोड़ा नहीं गया है। इसके लिए जरूरत इस बात की है कि इसकी शिक्षा, विश्वविद्यालयी स्तर पर दी जाये। काफी दौड़ धूप के बाद, श्री चतुर्भुज के प्रयास से, बिहार में प्रथम बार, इसे ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति ने एम०ए० में स्वतन्त्र विषय के रूप में प्रारम्भ किया। लगभग ढाई वर्षों तक श्री चतुर्भुज ने इस विश्वविद्यालय में प्रथम नाटक शिक्षक के रूप में काम किया। अब तक उस विश्वविद्यालय से अनेक महिला और पुरूष कलाकार विद्यार्थी नाट्यशास्त्र में एम०ए० की डिग्री ले चुके हैं।

मगध के ग्रामीण अंचलों में इस बीच ग्रामीण नाटक, आज का हिन्दी नाटक, ऐतिहासिक नाटक का रूपरंग आदि विषयों पर कई गोष्ठियाँ आयोजित की गई जिनमें स्थानीय लेखकों और कलाकारों को अनेक पक्षों का प्रशिक्षण विशेषज्ञों द्वारा दिया गया। कई जगहों पर नाटक भी किये गए।

कई रंगमंचीय नाटकों के प्रकाशन में भी संस्था ने सहयोग प्रदान किया और अन्य नाट्य संस्थाओं के नाट्य प्रदर्शन में अपने साधनों से उन सब को मदद पहुँचाई।

❖ ❖ ❖

पारसी नाटक : उद्भव और विकास

–डॉ0 चतुर्भुज
संस्थापक–निदेशक
'मगध आर्टिस्ट्स'

लगभग पचास साल पहले की बात है। कलकत्ता के एक थियेटर में 'कृष्ण लीला' पारसी नाटक का मंचन हो रहा था। मैं कलकत्ता पहुँच गया उस नाटक को देखने के लिए। कुछ दृश्य अद्भुत थे। एक दृश्य था–सागर के लहरों के बीच शेषनाग पर अधलेटे, विष्णु भगवान देवताओं को दर्शन देते हैं। लक्ष्मी उनके पैर दबा रही है। फिर जल के मध्य से नारद जी प्रकट होते हैं। सभी देवगण भगवान विष्णु से प्रार्थना करते हैं। यह पहला दृश्य ऐसा प्रभावोत्पादक था कि पूरे नाटक के लिए इसने दर्शकों को बाँध लिया। आगे के भी कई दृश्य इसी प्रकार के थे। एक अन्य दृश्य था 'रासलीला' का जिसमें राधा–कृष्ण की कुछ जोड़ियों 'रास नृत्य' करती हैं। स्टेज पर तीन तरफ शीशे लगे हैं। उसमें दर्जनों प्रतिबिम्ब राधा–कृष्ण के उभरते हैं। यह था पारसी नाटक का रूपरंग।

हिन्दी नाटक के विकास के पहले पारसी रंगमंच ने हिन्दी नाटक के लिए मार्ग प्रशस्त किया। यह काम अनजाने में हुआ क्योंकि पारसी रंगमंच का ऐसा कोई उद्देश्य नहीं था। आज मूल पारसी नाटक के आलेख बहुत कम मिलते हैं क्योंकि उन आलेखों को बचाने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया। थियेटर की कम्पनियाँ वेतनभोगी लेखकों से अपने लिए नाटक लिखवाती थीं। लेखक नाटक लिखकर दे देते थे और फिर अपनी पाण्डुलिपियों के बारे में भूल जाते थे। क्योंकि शायद ही उनकी कोई कापी लेखक के पास रह पाती थी। आज की तरह फोटोकापी की व्यवस्था उन दिनों नहीं थी। कम्पनियां बनती थीं और कुछ दिनों के बाद टूटती थीं। लेखक भी कम्पनी बदलते रहते थे। फिर उन नाटकों के आलेखों की सुरक्षा का ख्याल कौन रखता ? साहित्य के रूप में ऐसे नाटकों का कोई आदर नहीं था।

सन् 1853 पारसी रंगमंच की उत्पत्ति का साल माना जाता है। उसके पहले बम्बई में एक अंग्रेजी थियेटर था जहाँ वैसे अंग्रेजी नाटकों का मंचन होता था जो लोगों को अधिक से अधिक मनोरंजन प्रदान करते थे। ऐसे नाटकों के दर्शक प्रबुद्ध वर्ग के लोग नहीं होते थे। सैनिक, नाविक और कुछ घटिया किस्म के लोग सस्ते मनोरंजन के लोभ में थियेटर में जाते। थियेटर को भारी आर्थिक संकट से गुजरना पड़ा। थियेटर नीलाम हो गया और उसे खरीदा एक पारसी सेठ ने। थियेटर कई साल तक बन्द रहा। विरासत में इसी प्रकार के दर्शक पारसी थियेटर को भी मिले।

'थियेटर' शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त होता है। प्रेक्षागृह के रूप में, भाषा के रूप में, व्यवस्थापकों के रूप में, शैली के रूप में, कलाकारों के रूप में और दल के रूप में। पारसी थियेटर के जन्मदाता पारसी व्यवसायी थे। इनलोगों को धन की कमी नहीं थी। न इनमें लेखकों का अभाव था, न ही कलाकारों का। मात्र जन साधारण के मनोरंजन के लिए और अर्थ उपार्जन के लिए पारसी थियेटर प्रारम्भ किया गया। इस थियेटर की अपनी एक शैली बन गई। बाद में जो पारसी नहीं भी थे, उनलोगों ने भी 'पारसी थियेटर' के नाम का चोला नहीं छोड़ा। वैसे व्यक्तियों के थियेटर भी पारसी ही कहलाते थे जो पारसी नहीं थे। बम्बई में उतने हॉल नहीं थे कि इतने दलों और कलाकारों का उनमें समावेश हो पाता। मंडलियों की संख्या बढ़ रही थी। इसलिए बाद में घूमन्तू मंडलियों के रूप में ये कलाकार निकल पड़े। बड़े–बड़े शहरों से छोटे–छोटे नगरों तक इन मंडलियों द्वारा नाटक मंचित किये जाते रहे। इस तरह पारसी नाटक आम जनता के बीच काफी लोकप्रिय हुए। इनका प्रचार कार्य भी ग़ज़ब का था। ग्रामीण अंचलों से भी लोग झुंड में आकर टिकट खरीदकर नाटक देखते। आज कुछ लोग कहते हैं कि इनके नाटक अश्लील होते थे। लेकिन यह धारणा गलत है।

पारसी नाटकों ने मराठी, गुजराती, उर्दू और हिन्दी नाट्य साहित्य का मार्ग प्रशस्त किया। पारसी शैली का सबसे पहला गुजराती नाटक था— रुस्तम—सोहराब।

सन् 1854 के बाद कुछ और पारसी शैली के प्रहसन आये उनमें एक था 'हाजी मियां और उनके नौकर फ़ज़ल खाँ और तीखे खाँ।' पहली नाटक मंडली का नाम था—पारसी नाटक मंडली। पहले यह शौकिया मंडली थी, बाद में यह व्यावसायिक हो गई। भोली गुल, बागेबहिश्त, वफा पर वफा, कुलयुगी दोरंगी दुनिया आदि नाटक लिखवाये गये और अभिनीत किये गये।

संस्कृत के कुछ नाटकों का भी रूपान्तर हुआ जिन्हें हिन्दू ड्रामा कहा जाने लगा। कुछ पारसी कम्पनियों के नाम इस तरह थे—पारसी नाटक मंडली, एलफिन्सटन ड्रामा क्लब, पारसी स्टेज प्लेयर्स, जोरेस्ट्रियन नाटक मंडली, शेक्सपीरियन नाटक मंडली, विक्टोरिया नाटक मंडली, हिन्दी नाटक मंडली, कोरिन्थियन थियेट्रिकल कम्पनी, अल्फ्रेड कम्पनी, परिस्तान कम्पनी आदि।

प्रारम्भ में पारसी नाटक ईरान की कथाओं पर आधारित होते थे। बाद में भारतीय इतिहास और पुराण पर आधारित नाटक रचे गये। फिर सामाजिक कुरीतियों पर भी इन नाटकों ने प्रकाश डाला। प्रारम्भ के लेखक पारसी वर्ग के थे और गुजराती भाषा में नाटक लिखते थे। गुजरात के अन्तिम हिन्दू राजा—'राजा करण' पर आधारित नाटक के लिए हिन्दी संस्कृत जाननेवाले लोगों को कम्पनी ने शामिल किया और कलाकारों को वैसा प्रशिक्षण दिया गया। हिन्दू संस्कृति पर आधारित यह बड़ा प्रसिद्ध नाटक था। पारसी लेखकों में प्रसिद्ध थे—नशरवान जी दोराब जी, नवरोज की काबरा, एदल जी जमशेद जी, नाना भाई रुस्तम जी, बहमन जी नवराजी, बहराम जी पटेल, फिरोज बाटली वाला, दादा भाई मिस्त्री आदि।

पारसी रंगमंच को उर्दू और हिन्दी के लेखकों ने भी बहुत कुछ दिया। अब्बास अली अब्बास ने ज़ंजीरें जौहर, पंजाब मेल, श्रीमती मंजरी, सखी सुंदरी आदि नाटक लिखे। इब्राहम अम्बालवी ने दुश्मने ईमान, दोज़खी हूर, गुनहगार बाप, शकुन्तला उर्फ गुमशुदा अंगूठी, सत्याग्रह आदि उन्नीस नाटक लिखे। मुंशी विनायक प्रसाद तालिब के लगभग 14 नाटकों में प्रसिद्ध हैं—नल दमयंती, गोपीचन्द, हरिश्चन्दर आदि। नारायण प्रसाद बेताब पहले मिठाई की एक दूकान में नौकरी करते थे। लेकिन नाटक के शौक ने इनसे कई नाटक लिखवाये जिनमें प्रसिद्ध हैं— कत्ले नज़ीर, कृष्ण जन्म, मयूरध्वज, मीठा ज़हर, महाभारत, रामायण आदि। आगा हश्र कश्मीरी का जन्म बनारस में हुआ था। इनका परिवार गरम कपड़े का व्यवसाय करता था। इन्होंने कई अच्छे नाटक लिखे। आफताबे मुहब्बत, असीरे हिर्स, खूबसूरत बला, भगीरथ गंगा, तुर्की हूर, दिल की प्यास, यहूदी की लड़की, आँख का नशा, सिलवर किंग आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। इन्होंने इंडियन शेक्सपीरियन थियेट्रिकल कम्पनी बनाई। कलकत्ते में नाटकों का मंचन भी किया। इलाहाबाद आते—आते कम्पनी टूट गई। आगा हश्र फिल्मों में भी रहे। ये हिन्दी—उर्दू नाटकों के प्रसिद्ध लेखक थे।

बरेली के राधेश्याम कथावाचक पहले कथा बाचते थे। बाद में न्यू अल्फ्रेड कम्पनी के साथ जुड़ गये। इनके लिखे नाटकों में हैं—अभिमन्यु, रुक्मिणी मंगल, परिवर्तन, प्रहलाद, श्री कृष्णावतार आदि।

पारसी नाटकों की अपनी विशेषता थी। यह वह समय था जब रंगमंच के आधुनिक तकनीकी ज्ञान का सर्वथा अभाव था। न बिजली का प्रचार—प्रसार था और न माईक्रोफोन का, बिजली की जगह पेट्रोमैक्स का उपयोग किया जाता था। कलाकार में इतनी क्षमता होनी चाहिए थी कि उसकी आवाज कई हजार दर्शकों की अन्तिम पंक्ति तक सुनी जाये। यह भी आवश्यक था कि कलाकार डायलॉग तो शुद्ध बोले ही, साथ ही कुशलता से गायन भी कर सके। डायलॉग गद्य और पद्य में होते थे। चमत्कारिक दृश्य की बहुलता रहती थी। कटसीन के जरिये विचित्र—विचित्र दृश्य दिखाये जाते थे। जंगल, पहाड़ आदि के पर्दे रंगीन होते और उपर की तरफ रौल किये जाते थे। सामान्यतः नाटक तीन अंकों में बंटा रहता था। ड्राप सीन के गिरने से हर अंक की समाप्ति की जानकारी

मिलती। नाटक में संगीत पक्ष बड़ा ही महत्वपूर्ण होता। नाटकों में मुख्य विषय के अलावा बीच–बीच में प्रहसन होता था। इसकी अलग कथा होती जो समानान्तर रूप से चलती थी। प्रहसन का मूल नाटक से कोई सम्बन्ध नहीं होता। प्रहसन के जरिये समाज की कुरीतियों पर तीखा व्यंग्य किया जाता। ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकों की वेशभूषा चमकीली और आकर्षक होती। जहाँ बड़ी–बड़ी कम्पनियों में पेशेवर महिलाएँ नारी चरित्र की भूमिकायें निभातीं, वहीं छोटी कम्पनियों में नारी चरित्र की भूमिका लड़के बड़ी खूबी के साथ अदा करते।

लगभग सौ साल तक पारसी नाटकों का जादू जनमानस पर छाया रहा। लेकिन उसके बाद कई कारणों से पारसी नाटकों का अवसान हो गया। इसके कई कारण थे। सिनेमा की चकाचौंध के सामने पारसी नाटकों की शैली पुरानी पड़ने लगी। मनोरंजन के अन्य साधन आने लगे जो सस्ते थे। पारसी नाटक के स्टेज और प्रदर्शन आदि खर्चीले लगने लगे। थियेटर में पैसा लगाने से अधिक लाभकारी दूसरे व्यवसाय सामने आने लगे। लेखकों और पारसी कलाकारों की पूछ न घर में होती थी और न बाहर। थियेटर में काम करना अच्छा नहीं माना जाता था। सरकार से इसे कोई सहायता नहीं मिली। ये सब कुछ कारण थे जिनसे पारसी नाटक को समाप्त होने से कोई नहीं बचा सका।

अब पारसी नाटक की बानगी पर ध्यान दीजिए। अभिमन्यु पाण्डवों से यह जिद् करता है कि वह चक्रव्यूह का भेदन करेगा–

जिस तरह तोड़ा धनुष, सोलह बरस के राम ने।
जानकी को वर लिया, सब वीरवर के सामने।।

चकृत किया था राम को लव–कुश के उस संग्राम ने।
वध किया था कंस का सोलह बरस के श्याम ने।।

फिर अभिमन्यु सोलह बरस का, क्यों डरे संग्राम से।
धिक्कार है, जो देश दुखलखि, सो रहा आराम से।।

अभिमन्यु का वध होता है। अर्जुन संध्या से पूर्व अगले दिन जयद्रथ–वध की प्रतिज्ञा करता है। कृष्ण की माया से सूर्य बादलों में छिप जाता है। संध्या समझ कर अर्जुन अग्नि–प्रवेश के लिए तैयार होता है। दुर्योधन युद्ध बन्द करने की आज्ञा देता है–

अस्पताल पै रवि गया पूर्ण हुआ सब काम।
मित्र जयद्रथ बच गया, बन्द करो संग्राम।।

फिर–अर्जुन को चिढ़ाते हुए दुर्योधन कहता है–

त्याग दे अब शस्त्र को और छोड़ दे इस शोक को।
बैठकर जलती चिता में, जो चला यमलोक को।।

आज से 50 साल पूर्व अभिनीत नाटक 'महिषासुर–वध–पारसी शैली का नाटक

झलक पारसी थियेटर की : संस्मरण

—प्यारे मोहन सहाय
वरिष्ठ निदेशक और अभिनेता

प्यारे मोहन सहाय देश के उन वरिष्ठ कलाकारों में हैं जिन्होंने न केवल रंगमंच को, बल्कि रेडियो, फिल्म और टेलीविजन को पूरा योगदान दिया है। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में (NSD) ये बिहार के पहले छात्र रहे हैं। इन्होंने अनेक नाटकों का सफल निर्देशन किया, प्रमुख भूमिकायें कीं। 'मुंगेरी लाल के हसीन सपने' तथा अन्य टी०वी० धारावाहिकों में प्रमुख भूमिकाएँ कीं। ऑल इण्डिया रेडियो के नाटकों के राष्ट्रीय प्रसारणो में भाग लेने का सुयश इन्हें मिला। आज भी आकाशवाणी पटना की उच्च कोटि के नाट्य कलाकार ये जाने जाते हैं। इन्होंने मंच के वे सुनहरे दिन भी देखे हैं जब पारसी शैली के नाटक होते थे। इन्होंने अनेक पारसी नाटकों में भाग लिया है।—सं०

पारसी नाटक की शान निराली थी। एक तरफ अंग्रेज भारत में अपने पैर जमा चुके थे। दूसरी तरफ देश में मनोरंजन के प्रमुख साधन के रूप में पारसी नाटक के चमत्कार से लोग सम्मोहित हो रहे थे। पारसी नाट्य मण्डलियाँ अपने प्रदर्शनों के द्वारा सब का मनोरंजन करती थीं। कुछ पारसी व्यवसायियों ने आय का साधन समझकर इस व्यावसायिक रंगमंच की स्थापना की। इनका मुख्य उद्देश्य नाटकों के प्रदर्शन द्वारा पैसा कमाना था। ये नाटक के द्वारा दर्शकों का भरपूर मनोरंजन करते थें। चूँकि पारसी व्यावसायिक नाट्य मण्डलियों और कम्पनियों का उद्देश्य दर्शकों को सस्ता मनोरंजन प्रदान करना था, अतः उनके नाटक भी साहित्यिक एवं उच्च स्तर के नहीं थे। यूँ तो पारसी रंगमंच के लिए कई लोगों ने लिखा, पर आगा हश्र कश्मीरी के नाटक बहुत ही लोकप्रिय हुये। इनके नाटक यहूदी की लड़की, खूबसूरत बला, विल्वमंगल सूरदास, रूस्तम—सोहराब आदि ने दर्शकों को अपनी ओर खूब आकर्षित किया।

पारसी थियेटर के लिए बहुत से ऐतिहासिक, पौराणिक और सामाजिक नाटक भी लिखे गये। ये नाटक समाज की भलाइयों और बुराइयों को ध्यान में रखकर लिखे गये और काफी लोकप्रिय भी हुये। उनकी भाषा उर्दू हुआ करती थी। शेरो—शायरी की भरमार हुआ करती थी। कभी—कभी इनके संवाद हृदय को छू लेने वाले होते थे। नाटकों के संवाद में इमोशनल वैल्यू के साथ—साथ इंटेलेक्चूयल वैल्यू की भी झलक मिलती थी। चूँकि दर्शकों के मनोरंजन को ध्यान में रखकर नाटक लिखे गये थे, इसलिए नाटकों में नाच एवं गाने की भरमार हुआ करती थी। राजाओं के दरबार में 20—20, 25—25 लड़कियों का नृत्य दिखाया जाता था और लोगों को हंसाने के लिए कॉमेडी के दृश्यों का होना भी आवश्यक था। कलाकारों के ड्रेस पर बहुत खर्च होता था। विशेषकर महिलाओं के ड्रेस पर आँख मूंद कर खर्च किया जाता था। नाटकों में बड़े—बड़े सेट लगाये जाते थे और कोशिश की जाती थी कि नाटक के सेट वास्तविकता के बहुत करीब हों। इसमें भी काफी पैसा खर्च होता था।

पैट्रोमैक्स की रोशनी में ही नाटक किया जाता था। हर पैट्रोमैक्स में कूट का एक कभर बना होता था। जरूरत पड़ने पर कभर को उपर खींच लिया जाता था। इससे रंगमंच पर अंधेरा हो जाता था। कभी—कभी किसी ऐक्शन को हाईलाईट करने के लिए आर्कलैम्प का प्रयोग किया जाता था। हर मंच में एक स्ट्रीट सीन (पर्दा) होता था। इसका प्रयोग अधिकतर कॉमेडी सीन, नृत्य या गाने के लिए किया जाता था। इसके दो फायदे होते थे। ये फायदे थे—

1. स्ट्रीट सीन पर नाटकों में एक्स्ट्रा डांस और म्यूजिक का कार्यक्रम होता था।
2. स्ट्रीट सीन के पीछे बड़े सेट को लगाने का समय मिल जाता था। स्ट्रीट में परदे पर रोड

की पेंटिंग तथा रोड के किनारे बड़े–बड़े विशाल मकान दिखाये जाते थे।

उस जमाने में माइक्रोफोन नहीं हुआ करता था। कलाकारों को दर्शकों की आखिरी सीट तक अपनी आवाज पहुँचानी होती थी। कलाकार स्वयं गाते थे। मंच के सामने ऑरकेस्ट्रा वालों के बैठने की जगह होती थी। यह स्थल स्टेज से नीचे सामने होता था ताकि रंगमंच और दर्शकों के बीच व्यवधान न हो।

कुछ दिनों तक तो पारसी रंगमंच का बोलबाला रहा। ये लोग बड़े–बड़े शहरों में नाट्य मण्डलियाँ लेकर जाते थे और भरपूर पैसा कमाते थे। बड़े–बड़े मेलों में भी पारसी थियेटर ने अपना शो करना शुरू किया। अधिक खर्च के कारण कम्पनियों का बोझ बढ़ना शुरू हो गया। धीरे–धीरे इनके प्रोडक्शन का स्तर घटने लगा और कम्पनियाँ बंद होती गयीं। वैसे तो अभी भी मेलों में पारसी थियेटर का विकृत रूप नाटक कम्पनियों द्वारा प्रस्तुत नाटकों में देखा जा सकता है। लेकिन अब पुरानी बात कहाँ?–न वह आन है, न वह बान है, न वह शाह है। सिर्फ नकल है– नकल।

ज्यों–ज्यों हिन्दी के आधुनिक रंगमंच का विकास होता गया, त्यों–त्यों पारसी थियेटर की लोकप्रियता कम होती गई। अब तो लोग पारसी थियेटर को प्रायः भूल ही गये हैं। पारसी थियेटर के कलाकार बड़े मंजे हुए होते थे। पर उनकी ऐक्टिंग "ओभर ऐक्टिंग" होती थी। इनके सारे ऐक्शन और मूवमेन्ट 'टू डाईमेनशनल' हुआ करते थे। उन दिनों स्टेज पर पीठ दिखाना मना था। ऐसी थी झलक पारसी थियेटर की।

'बहादुरशाह' नाटक में निकोल्सन (चतुर्भुज)

'पीरअली' नाटक में इंस्पेक्टर मेंहदी अली (शीलभद्र) और शीला (विशाखा)

नाटक : कल और आज

—अशोक प्रियदर्शी

अंग्रेजी के प्रसिद्ध नाटककार विलियम शेक्सपीयर ने अपनी रचना 'ऐज यू लाइक इट' में कहा है कि वर्ल्ड इज ए थियेटर—अर्थात दुनिया एक रंगमंच है। सचमुच यह कथन बिल्कुल सत्य प्रतीत होता है। जिस तरह विभिन्न पात्रों का निर्वहन करने के लिए रंगमंच पर चरित्रों का आगमन होता है—ठीक उसी तरह दुनिया रूपी रंगमंच पर पुरूष एवं नारी चरित्रों का जन्म होता है। लेखक द्वारा गढ़े गये चरित्रों का निर्वहन जिस प्रकार मंच पर किया जाता है—ठीक उसी तरह ईश्वर द्वारा दुनिया में आये विभिन्न पात्र अपने—अपने चरित्रों का सफल चित्रण करते हैं। अगर हम संक्षेप में यह कहें कि मनुष्य अपने जन्म के साथ ही उक्त चरित्र में जीने का अभिनय प्रारम्भ कर देता है और उसका अभिनय उसकी मृत्यु तक वर्तमान रहता है तो यह गलत नहीं होगा।

'नाटक एक ऐसी काव्य विद्या है जो श्रव्य और दृश्य प्रधान है। नाटक के मुख्य तीन अंग हैं—नाटककार, अभिनेता या अभिनेत्री और दर्शक। नाटककार मस्तिष्क होता, अभिनेता या अभिनेत्री शरीर और दर्शक नाटक का हृदय है। किसी भी अंग के बिना नाटक को सम्पूर्ण नाटक कहना अनुचित होगा। नाट्य लेखन के समय नाटक साहित्य होता है। नाटक की तैयारी करते समय यह कला बन जाता है और नाट्य प्रदर्शन के दौरान इसे विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है। नाटक एक ऐसी विद्या है जिसके अन्तर्गत लेखन, अभिनय, मेकअप, पार्श्व ध्वनि, ड्रेस डिजायनिंग, सेट निर्माण, प्रकाश, जन सम्पर्क आदि सभी चीजें सम्मिलित हैं।

'रंगमंच' शब्द, दो शब्दों के मेल से बना है। दोनों शब्दों के अलग—अलग अर्थ स्वयं ही दृष्टिगत होते हैं। 'रंग' शब्द के उच्चारण से ही प्रतीत होता है अनेक रंग और मंच शब्द से स्पष्ट होता है कोई वैसा निर्धारित स्थल जिसपर अनेक रंगों की अनुभूति हो। 'नाट्य शास्त्र' में रंग शब्द, नाटक के विभिन्न आयामों के सम्मिश्रण का द्योतक है।

विश्व में नाटक की उत्पत्ति का श्रेय भारतवर्ष को दिया जाता है। प्राचीन ग्रंथों से ज्ञात होता है कि त्रेतायुग में ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से संगीत, यजुर्वेद से कार्य व्यापार (Action) और अथर्ववेद से रस लेकर एक अलग वेद का निर्माण किया, जो 'नाट्यवेद' अथवा 'पंचम वेद' कहा गया। ब्रह्मा जी के आदेशानुसार ही भरतमुनि ने पहला नाट्य प्रदर्शन इन्द्र के ध्वजारोहण के अवसर पर, इन्द्र सभा में किया था। नाटक था—'अमृत मंथन'।

भगवान शिव के सामने जब दूसरा नाटक 'त्रिपुरदाह' प्रदर्शित किया गया तब उन्होंने भरतमुनि को सुझाव दिया कि वे नाटक में 'नृत्यकला' को भी सम्मिलित करें। स्वयं भगवान शंकर ने 'नाट्यवेद' नामक पंचमवेद में 'ताण्डव' नृत्य को प्रदान किया और माता पार्वती ने 'लास्य' नृत्य प्रदान किया। उसी समय से नाटकों में नृत्य का प्रचलन शुरू हुआ। ऐसा उल्लेख मिलता है कि विश्व का प्राचीनतम नाटक यहीं का है और नाटक पर आधारित विश्व का पहला ग्रंथ भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र' ही है। वैसे पश्चिम के विद्वान ग्रीक नाटक को प्राचीनतम नाटक मानते हैं।

वैसे तथ्य कुछ भी हो लेकिन इतना तो मानना ही होगा कि विश्व के अन्य देशों में नाटकों का जन्म भारतवर्ष और ग्रीक के नाटकों के बाद ही हुआ है। विभिन्न देशों के नाटकों पर दृष्टि डाली जाये तो एक निष्कर्ष और भी सामने आता है—वह है ईश्वर की आराधना। विश्व के हर नागरिक ने अपने—अपने परिवार, समाज, देश के कल्याण के लिए नाटकों का सहारा लिया है। नाटकों के स्वरूप में भिन्नता रही है। लोक नाटकों का प्रचलन काफी पहले से रहा है। आगे चलकर उन्हीं लोक नाटकों को आधार लेकर नाट्य साहित्य की रचनाएँ हुई। फिर नाट्य रचनाओं के बदलते रूप देखने को मिले। तत्कालीन सामाजिक घटनाओं को नाटक का विषय बनाया गया—साथ ही उनमें दर्शकों के मनोरंजन के लिए भी तत्व रखे गये।

भारतवर्ष में संस्कृत से पूर्व के नाटकों का

उल्लेख नहीं मिल पाता। संस्कृत नाटककारों में भास, भवभूति, कालिदास, शूद्रक, विशाखदत्त आदि की रचनाएँ क्लैसिक रचनाओं की श्रेणी में आती हैं।

अंग्रेज अपने मनोरंजन के लिए नाटकों का प्रदर्शन करते थे। लेकिन दर्शकों में भारतीय लोगों के प्रवेश पर निषेध था। अंग्रेजी नाटकों के प्रदर्शन का प्रचलन जोर–शोर पर था। भारतीय दर्शकों के दिल में भी अपनी भाषा में नाटक प्रदर्शन करने की उत्कंठा जागृत होने लगी। विभिन्न प्रदेशों में नाटकों की बुनियाद पड़ने लगी। बंगला, मराठी, तमिल, तेलुगु, हिन्दी आदि भाषाओं में नाटकों की बुनियाद पड़ी।

विभिन्न प्रदेशों के लोक नाटक का भी विस्तार होने लगा। इसी समय पारसी नाटकों का युग आया। घुमन्तू पारसी नाटक कम्पनियाँ दर्शकों को अपनी ओर आकृष्ट करने लगीं। ऐसी नाट्य कम्पनियों की अपनी विशेषता होती थी।

भारतेन्दु युग के बाद हिन्दी नाटकों के स्वरूप में परिवर्तन हुए। लेकिन पारसी नाटकों का प्रभाव भी हिन्दी नाटकों पर देखा जाता रहा। आजादी की लड़ाई में भी नाटकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। धीरे–धीरे रंगमंच के साथ नयी–नयी तकनीकि जुड़ती गयी। नाटक खेलने का सिलसिला पूरी रात के बाद तीन–चार घंटों में सिमटता गया। प्रकाश की तकनीकि से रंगमंच पर विचित्र दृश्यों को दिखलाने की परम्परा शुरू हो गई। पुरूषों द्वारा स्त्री चरित्र प्रदर्शित न कर, स्त्रियों द्वारा ही इसकी भूमिका की जाने लगी। नाटकों में लोक नाटकों को भी मिश्रित किया गया। नाटकों की अवधि इन दिनों एक से डेढ़ घंटे की हो गई है।

आज नाटक रंगमंच से उतर कर चौक–चौराहे तक पहुँच गया है। नुक्कड़ नाटकों का प्रचलन पूरे देश में छाया है। अब नाटकों में सेट निर्माण में भी कमी हो गई है। सांकेतिक सेट का प्रचलन हो गया है। संकेतों के द्वारा कलाकार अपने सहयोगी कलाकार की हत्या करता है, फांसी के तख्ते पर लटकता है, बेटी की विदाई होती है। पार्श्व ध्वनि के माध्यम से मंच पर भीड़–भाड़, युद्ध के दृश्य, करूण दृश्य आदि आसानी से प्रस्तुत किये जा रहे हैं। फिल्म, रेडियो–दूरदर्शन के आगमन से दर्शकों, नाटककारों पर एक विशेष प्रभाव पड़ा है। लोगों में बदलाव आया है। इन दिनों युवा वर्ग, नाटक को रेडियो, दूरदर्शन और फिल्मों में प्रवेश पाने का प्रथम सोपान मानने लगा है। लेकिन अनुभव की कमी के कारण उन्हें सफलता नहीं मिल पाती। रंगमंचीय नाटकों और नुक्कड़ नाटकों के संवाद आकाशवाणी–दूरदर्शन के सम्वादों की तरह छोटे–छोटे, सरल भाषा में हो गये हैं।

नाटक, प्रचार–प्रसार का एक सशक्त माध्यम है। केन्द्र सरकार और विभिन्न प्रदेशों की सरकार की देख–रेख में गीत एवं नाटक प्रभाग की स्थापना की गई है ताकि सरकारी योजनाओं का प्रचार–प्रसार शहरी जनता के साथ–साथ ग्रामीण जनता के बीच भी व्यापक रूप से की जा सके।

आज रंगकर्मियों में अनुशासन का अभाव है। नाटक के प्रति पूर्ण निष्ठा नहीं रह गई है। महत्वाकांक्षा की वृद्धि हुई है। नाट्य प्रशिक्षण का अभाव है। उसे दूर कर नाटक को सशक्त बनाने की आवश्यकता है।

'झांसी की रानी' नाटक में बायें से जनरल सर ह्यू रोज (चतुर्भुज), दूल्हा सिंह (अशोक प्रियदर्शी) और मेजर स्टूअर्ट (अनन्त कुमार)–1990 ई०

बिहार के कुछ हिन्दी नाटककार

—कुमार शान्तरक्षित

भारतेन्दु युग में अनेक नाटकों की रचनाएँ प्रकाश में आईं। स्वयं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अनेक मौलिक नाटक लिखे, अनेक नाटकों का अनुवाद और रूपान्तरण किया। वे स्वयं अच्छे अभिनेता भी थे। उनका जीवनकाल सिर्फ 35 साल का था। इतने कम समय में उन्होंने हिन्दी को इतना कुछ दिया कि आश्चर्य होता है। भारतेन्दु के दो नाटक आज भी मंचित होते हैं। वे हैं—सत्य हरिश्चन्द्र और अंधेर नगरी।

भारतेन्दु के बाद हुए जयशंकर प्रसाद। इनके ऐतिहासिक नाटक भारतीय गौरव और शौर्य को प्रकट करते हैं। इनके नाटकों में हमारे राष्ट्र का सांस्कृतिक अभिमान है जो सोये हुए को जगाता है। इनके नाटक साहित्यिक अधिक और मंचीय कम हैं। 'ध्रुवस्वामिनी' एकमात्र ऐसा नाटक है जो छोटा है और उसका मंचन किया जा सकता है। ये युगद्रष्टा थे। इनके प्रसिद्ध नाटक हैं—अजातशत्रु, चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, जनमेजय का नागयज्ञ आदि।

बिहार ने भी नाटक के क्षेत्र में कई ऐसे व्यक्तियों को उत्पन्न किया है जिन्होंने अनेक काम किये। श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी के तीन नाटक प्रसिद्ध हैं। ये कलम के जादूगर थे। इनके नाटक हैं—अम्बपाली, नेत्रदान और विजेता। अम्बपाली वैशाली की राज नर्त्तकी थी जो बाद में बौद्धसंघ में शामिल हो गई। नेत्रदान में अशोक के पुत्र कुणाल के त्याग और रानी तिष्यरक्षिता की दुष्टता की कथा है। विजेता नाटक मगध सम्राट चन्द्रगुप्त की जीवनी पर आधारित है।

कम लोग जानते हैं कि भाषा में फूलझड़ी उत्पन्न करनेवाले राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह ने भी चार नाटक लिखे। ये नाटक हैं—नये रिफार्मर (नये सुधारक), नजर बदली—बदल गये नजारे, धर्म की धुरी, अपना—पराया। ये नाटक साम्प्रदायिक सद्भाव, अछूत—समस्या, जमींदारी—उन्मूलन पर हैं।

डॉ० सिद्धनाथ कुमार मूलतः रेडियो के नाटककार हैं। लेकिन रंगमंच के लिए भी पूर्णकालिक और एकांकी नाटक लिखे। उनमें हैं—अश्वमेध, इतिहास का धूमकेतु, चौदहवर्ष, विजेता, पांचवीं बेटी, टूटा हुआ आदमी, सृष्टि की सांझ, मुर्दे जियेंगे, आदि। इनके नाटकों में यांत्रिक युग के मनुष्य की विवशता, पारिवारिक दुख दर्द आदि कथ्य हैं।

डॉ० जितेन्द्र सहाय पेशे से सर्जन हैं। नाटक के क्षेत्र में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। मामूली घटनाओं को कल्पना की चाशनी में डालकर मीठा बनाने की कला कोई उनसे सीखे। उनके प्रकाशित नाटकों में हैं—बगल का किरायेदार, भटकते लोग, एक पर एक, निन्यानवे का फेर, मुंडन आदि। हास्य—व्यंग्य इनके नाटकों के खास गुण हैं।

रामेश्वर सिंह काश्यप ने भोजपुरी नाटक 'लोहासिंह' से काफी यश अर्जित किया। इसके अनेक खंड आकाशवाणी से प्रसारित हुए। लोहा सिंह की भूमिका ये खुद करते थे। इनके अन्य नाटक हैं—नीलकंठ निराला, समाधान, बेकारी का इलाज आदि। 65 वर्ष की अवस्था में इनका निधन हो गया।

बाबूराम सिंह लमगोड़ा जहानाबाद जिले के थे। छोटे—बड़े लगभग दो दर्जन नाटक लिख चुके। इनके प्रमुख नाटक हैं—कोशा, प्रणयपाल, प्रतिशोध, आत्मसमर्पण, सबशेष हो गया, गांव की ओर, बाबा की सारंगी, महामानवे सागरतीरे, भगवान श्रीकृष्ण के अन्तिम दिन, वह शम्बूक, पारिजात, कच—देवयानी आदि। इन्होंने मगही में भी कुछ नाटकों की रचना की।

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार हिमांशु श्रीवास्तव ने रेडियो के लिए अनेक नाटक लिखे। रंगमंच के लिए भी लिखे। इनके नाटकों में चण्डीदास, पैसा बोलता है, आदि प्रसिद्ध हैं।

बिहार (समस्तीपुर के सिंधिया गांव) के कमलेश्वर सिंह कमलेश ने अपना सारा जीवन नाटक में लगा दिया। अपनी थियेट्रिकल पार्टी को दूर—दूर तक ले जाकर नाट्यमंचन करते थे। सिंधिया में एक नाटक घर का भी निर्माण कराया था। इनके लिखे कई नाटक हैं जिनमें सत्य हरिश्चन्द्र की कथा पर आधारित नाटक 'कारण काल किनारा' बड़ा लोकप्रिय था। कमलेश जी

सफल नाटककार, निदेशक और अभिनेता थे। कुछ वर्ष पहले इनकी असामयिक मृत्यु हो गई।

आकाशवाणी के नामी नाटक प्रोड्यूसर जनार्दन राव के दो मंच नाटक प्रकाश में आये हैं। एक है–'एक और सूर्यास्त' जो एक रिटायर्ड सरकारी नौकर की व्यथा कहता हैं। दूसरा है–'बहुरूपिया' जो साम्प्रदायिक सद्भाव पर आधारित है।

राधाकृष्ण प्रसाद का नाम मूलरूप से उपन्यासकार और कहानीकार के रूप में प्रसिद्ध है। इन्होंने रेडियो के लिए अनेक नाटकों और रूपकों की रचना की और उन्हें प्रस्तुत भी किया। इनके नाट्य संग्रह 'ढलती शाम की यात्रा' में अनेक छोटे–बड़े नाटक संग्रहीत हैं। ये आकाशवाणी और दूरदर्शन से लम्बे समय तक जुड़े रहे। इनके नाटकों में मानवीय संत्रास, घुटन, पारिवारिक विग्रह, सामाजिक समस्याएँ हैं।

बिहार (भोजपुर, आरा) के निवासी मधुकर सिंह के लिखे अनेक उपन्यास, कहनी–संग्रह हैं। हास्य–व्यंग्य मिश्रित इनका नाटक 'बाबूजी का पासबुक' बड़ा सफल नाटक है। 'लाखो' नाटक लोकशैली में है। सामाजिक परिवेश का नाटक 'सुबह के लिए' है। विदेसिया के जनक भिखारी ठाकुर को केन्द्र मान कर इनका नाटक है 'कुतुब बाजार'। आधुनिक हिन्दी लेखकों में इनका नाम बड़ा चर्चित है।

सतीश प्रसाद सिन्हा आरा के हैं। इनके चर्चित नाटकों में उल्लेखनीय हैं–अपने पराये, सतरंगे लोग, बंद आकाश, आधा आदमी, दो बजकर चालीस मिनट, यह गुलिस्तां हमारा, पति सम्मेलन और जादूगरनी।

सतीश कुमार मिश्र आकाशवाणी और दूरदर्शन के चर्चित नाटककार थे। हिन्दी और मगही में बराबर लिखते रहे। रंगमंच के लिए अनेक नाटक लिखे। जय–जय राम रघुराई, हिन्दी के एक हजार साल, बुद्धम् शरणम् गच्छामि, त हम कुंआरे रहें, ढेला–पत्ता, सेठ की भट्ठी, रेशम की पट्टी आदि इनके चर्चित नाटक हैं। 3 अक्टूबर 2006 को इनका अचानक निधन हो गया।

कृष्ण अम्बष्ठ ने अपने मंच नाटकों और नुक्कड़ नाटकों के द्वारा अपनी विशेष पहचान बनाई है। सरकारी सेवा में प्रशासकीय पदों पर रहे और इस बात से अच्छी तरह अवगत रहे कि वहां अधिकारियों, कर्मचारियों, दलालों, ठेकेदारों, नेताओं द्वारा किस तरह कल्याणकारी योजनाओं की धज्जी उड़ाई जाती है। इनके चर्चित और सफल नाटकों में हैं–जरूरत इसी की थी (बालश्रम की समस्या), लातों के देवता (नाट्यसंग्रह), फार्मूला (वैज्ञानिक नाटक), कोई कथा कहो बैताल आदि।

ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकों को आज के परिवेश में पुनः जीवित करने का बीड़ा उठाया है सफल नाटककार, निदेशक और अभिनेता चतुर्भुज ने। इन्होंने पारसी शैली के नाटकों का युग देखा और आज की शैली में अनेक नाटक लिखे और अपनी संस्था 'मगध कलाकार' द्वारा घूम–घूम कर मंचन किया। उनके नाटक हैं–मेघनाद, कर्ण, सिराजुद्दौला, मीरकासिम, कलिंग–विजय, श्रीकृष्ण, अरावली का शेर, कंसवध, भगवान बुद्ध, कृष्ण कुमारी, कारागार, टीपू सुल्तान, काल सर्पिणी, बहादुरशाह, पाटलिपुत्र का राजकुमार, झांसी की रानी, शिवाजी, कुंवर सिंह, रावण, सिकन्दर–पोरस, पीरअली, शकुन्तला, मुद्राराक्षस, बाबू विरंचीलाल आदि।

परेश सिन्हा ने अपने 50 वर्षों के उपर के सृजनकाल में अनेक कविताएँ, कहानियाँ, नाटक, निबन्ध, आलोचना आदि लिखकर एक अलग पहचान बनाई है। बिहार के नाट्य आन्दोलन में इनकी अच्छी भूमिका रही है। सन् 70 के दशक में परेश जी ने कई समस्यामूलक नाटक लिखे। उनका निर्देशन किया और मंच पर प्रस्तुत किया। हॉल में 'गाँधी नहीं मरेगा' शीर्षक से इनका एक नाट्य संग्रह प्रकाशित हुआ है जिसमें पुरूष छाया, गांधी नहीं मरेगा, मुर्दे, सहित ग्यारह नाटक हैं। इन नाटकों में इन्होंने कई नये प्रयोग किये हैं। पुस्तक के अन्त में इन्होंने बिहार की नाट्य संस्थाओं की एक सूची भी दी है और उनके कार्यकलापों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। इससे इस पुस्तक का महत्व बढ़ गया है।

बिहार के नाट्य आन्दोलन में अनिल कुमार मुखर्जी का योगदान भुलाया नहीं जा सकता। कठिन परिस्थितियों में इन्होंने बिहार आर्ट थियेटर की स्थापना की और बिहार के रंगकर्मियों को कालिदास रंगालय नामक प्रेक्षागृह दिया। यह कालिदास रंगालय इन दिनों रंगकर्म का एक

लोकप्रिय केन्द्र बनकर सेवा कर रहा है। यहाँ नियमित रूप से नाट्य प्रदर्शन होते हैं। अनिल बाबू ने चतुर्भुज लिखित नाटक 'रावण' का प्रदर्शन, अपने निर्देशन में, छुट्टियों के दिन लगातार तीन महीने तक कराया जो एक मील का पत्थर माना जाता है। इनके लिखे नाटक हैं—जली खिचड़ी, विप्लवी, आसाम मेल, भगवान रामचन्द्र एक अच्छे आदमी की खोज में, जय बंगलादेश, मिनी और काबुलीवाला, कॉकटेल, पालकी, बहुरूपी, कारखाना, कांचन रंग, नया बंगला, आदि। ये नाटक आज भी याद किये जाते हैं। इनकी टीम कोलकाता, दिल्ली, जयपुर आदि जगहों पर भी प्रदर्शन कर चुकी है। आज भी आर0पी0 तरूण, अजीत गांगुली, अरूण कुमार सिन्हा, प्रदीप गांगुली आदि कर्मठ रंगकर्मी के रूप में काम कर रहे हैं।

युवा नाटककार हृषीकेश सुलभ वैसे तो आकाशवाणी में कार्यरत हैं। लेकिन, साहित्यकार और नाटककार के रूप में इनकी अपनी ख्याति है। इनके नाटक अमली, मिट्टी की गाड़ी, और विदेसिया मंच पर काफी नाम कमा चुके हैं। सुलभ जी ने मंच पर अनेक तरह के प्रयोग किये हैं। दिल्ली में भी इनके नाटक मंचित हो चुके हैं और दर्शकों से प्रशंसा पा चुके हैं।

बिहार में विगत वर्षों में अनेक नाट्य संस्थाएँ प्रकाश में आईं। उनमें अनेक किसी न किसी कारण से दम तोड़ चुकी हैं। फिर भी कुछ संस्थाएँ आज भी नाटक के क्षेत्र में सभी विपत्तियों को झेलते हुए अपने दम पर खड़ी हैं। इनमें प्रमुख हैं—बिहार आर्ट थियेटर, मगध कलाकार, कला जागरण, निर्माण कला मंच, इप्टा, सूत्रधार, प्रांगण, प्रयास, जनता ड्रामेटिक क्लब (कोइलवर), तरूण भवतारिणी नाट्य समिति (सोनपुर), रंगमंच (आरा), किरण नाट्य परिषद् (पंडारक), हिन्दी नाटक समाज (पंडारक), एच०एम०टी० (पटना) आदि।

इसमें कोई संदेह नहीं कि बिहार के नाटककार और रंगकर्मी मन—प्राण से नाट्य साधना में एक लंबे समय से लगे हैं। उठते हैं, गिरते हैं और फिर उठते हैं। यह एक कठिन तपस्या है। यदि सरकार और अन्य सूत्रों से आर्थिक सहायता मिले तो बिहार में हिन्दी नाटक और भी प्रगति कर सकता है।

यह खेद का विषय है कि इस विद्या को आज तक रोजी—रोटी से नहीं जोड़ा गया। आवश्यकता इस बात की है कि विश्वविद्यालय के स्तर पर पढ़ाई और प्रशिक्षण के लिए नाट्यकला का नियमित कोर्स चलाया जाये जैसा दूसरे विषयों का चलाया जाता है। नाट्य कला को रोजी—रोटी तथा व्यवसाय से जोड़ा जाये, क्योंकि यह एक सशक्त माध्यम है। रेडियो, दूरदर्शन, जन सम्पर्क, आदि क्षेत्रों में जीविका पाने का सही साधन है।

कुछ वर्ष पूर्व ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय में एम०ए० स्तर पर नाट्य शास्त्र की पढ़ाई प्रारम्भ हुई थी। लेकिन कुछ वर्षों बाद उसमें अनेक अवरोध आये। डॉ० चतुर्भुज अनेक विश्वविद्यालयों से आग्रह करते रहे। लेकिन किसी ने उनके इस उपयोगी सुझाव पर ध्यान नहीं दिया। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षण संस्थाएँ इस विषय को अपने पाठ्यक्रम में स्थान दें क्योंकि इससे युवा वर्ग और कला जगत का हित जुड़ा है।

'शकुन्तला' नाटक में बायें से प्रियम्वदा (नूरफातिमा), अनुसूया (रत्ना पुरकायस्था) और शकुन्तला (देवयानी चौधरी)—1977 ई०

आचार्य शिवपूजन सहाय के हिन्दी रंगमंच के सम्बन्ध में विचार

आचार्य शिवपूजन सहाय हिन्दी के ऐसे साहित्यकार थे जो हिन्दी रंगमंच के विकास के लिए चिन्तित थे। एक बार उन्होंने एक साहित्यिक सभा में चतुर्भुज-लिखित 'मेघनाद' नाटक के उस डायलाग को सुना था जहाँ शक्तिबाण लगने से लक्ष्मण मूर्छित पड़े हैं और राम विलाप कर रहे हैं। डायलाग सुनकर शिवपूजन सहाय जी रो पड़े थे। बातचीत में उन्होंने हिन्दी रंगमंच के विकास की अनिवार्यता पर जोर दिया था। उन्होंने बरसों पूर्व अपने दो लेखों में हिन्दी रंगमंच और हिन्दी रंगकर्मियों की उपेक्षा का प्रश्न उठाया था। उनका एक निबन्ध 'नाटक' मासिक 'लक्ष्मी' (गया) में सन् 1916 ई० में प्रकाशित हुआ था। दूसरा लेख 'बंगीय रंगमंच' मासिक 'माधुरी' (लखनऊ) में सन् 1927 में छपा था।

एक अंश

'जिस देश में नाटक का प्रचार नहीं है, जिस जाति में नाटक का समुचित समादर नहीं है, जिस जाति के साहित्यकार में नाटक नवेन्दु की सुधा मरीचियों का विकास-प्रकाश नहीं है, जिस देश के साहित्य में उच्चतम आदर्श का समावेश नहीं है और जो जाति नाटक जैसे साहित्य सागर रत्नोपम विषय की विशद उपयोगिता समझने की बुद्धि नहीं रखती, उस देश तथा उस जाति में भला सहृदयता, सजीवता, सम्प्राणता, एकैकता, सभ्यता साहित्यानुरागिता, विद्यारसिकता इत्यादि प्रधान गुण कहाँ हैं?......जो लोग नहीं जानते कि साहित्य किस चिड़िया का नाम है, वे ही लोग अपने मन में समझे बैठे हैं कि नाटक खेलने वाले और नाटक देखनेवाले दोनों ही बदमाश, आवारे, लखेरे, निकम्मे और विद्याविमुख हुआ करते हैं। अपने साहित्य की गौरववृद्धि के लिए जिस प्रकार बंगालियों को कलकत्ता, गुजरातियों को बम्बई और मराठो को पूना जैसे विशाल उर्वरक्षेत्र मिले हैं, उसी तरह क्या हिन्दीवालों को लाहौर, अमृतसर, दिल्ली, आगरा, जबलपुर, नागपुर, लखनऊ, कानपुर, प्रयाग, काशी, पटना आदि बड़े-बड़े नगर नहीं मिले हैं?, फिर क्या कारण है कि इन प्रमुख नगरों में कहीं भी कोई हिन्दी प्रधान नाटक कम्पनी नहीं है?-जिस कलकत्ता में कई हिन्दी प्रधान नाट्य समितियाँ हैं, जहाँ हिन्दी प्रेमी करोड़पतियों के गिरोह बसते हैं, वहाँ भी हिन्दी की अपनी रंगशाला नहीं है।'

'पीरअली' नाटक में पीरअली (अशोक प्रियदर्शी) को यातना देते कमिश्नर टेलर (चतुर्भुज)-1975 ई०

एक निवेदन

नाटक को रोज़ी-रोटी से जोड़ना आवश्यक है। इसलिए नाटक को विद्यालय और कॉलेज के पाठ्यक्रमों में स्थान मिलना चाहिए। रेडियो, टेलीविजन, फिल्म, जनसम्पर्क आदि क्षेत्रों में प्रवेश के लिए नाटक का प्रशिक्षण और अध्ययन पहली सीढ़ी है। हम इसके लिए जी-जान से प्रयास करें।

मंच और मुखौटा

–प्रो० श्याम शर्मा

प्रोफेसर श्याम शर्मा मूलतः चित्रकार हैं और पटना आर्ट्स और क्राफ्ट कॉलेज में ग्राफिक्स आर्ट्स के वरिष्ठ प्राध्यापक रह चुके हैं। उन्होंने उस कॉलेज में प्रिंसिपल के रूप में भी कार्य किया है। राष्ट्रीय स्तर पर अपनी कलाकृति की अनेक प्रदर्शनी लगाई और पुरस्कृत हुए। नाट्यकला में इनका योगदान अपूर्व रहा है। इनके साथ इनकी धर्मपत्नी श्रीमती नवनीत शर्मा ने भी नाट्य आंदोलन में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया है। नवनीत जी ने अनेक नाटकों में मुख्य भूमिकाएँ निभाई हैं। श्याम शर्मा जी अभिनेता और स्टेज क्राफ्ट मैन के रूप में विभिन्न संस्थाओं से जुड़े रहे। बिहार में नाट्य आन्दोलन पर इनकी एक पुस्तक भी प्रकाशनाधीन है। उन्हीं का यह आलेख है– 'मंच और मुखौटा'।

सम्पादक

यह कहना कठिन है कि मंच पर मुखौटे का प्रचलन और अविर्भाव कब से हुआ। ऐसा अनुमान किया जाता है कि मानव सभ्यता के विकास के बाद, पर्व–त्योहार के अवसर पर, देवी–देवताओं को प्रसन्न करने के लिए नृत्य–नाट्य में प्रथम बार मुखौटों का प्रयोग हुआ होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि सांस्कृतिक मंच पर मुखौटे की भूमिका प्रतीकात्मक और अर्थपूर्ण रही होगी। यह भी सम्भव है कि अभिनेतागण मुख से उत्पन्न एकरसता के भाव को हटाने के लिए मुखौटे का प्रयोग करते होंगे। पूजा–पाठ और मृतक व्यक्ति की आत्मा की शांति हेतु मुखौटों का योगदान महत्वपूर्ण रहा होगा।

अनेक प्रकार के मुख मुद्राओं को लाल, पीला, काला, उजला और गुलाबी रंगों को प्रदान कर आकर्षक मुखौटे बनाये जाते हैं जो हमारे जन–जीवन को आन्दोलित करते हैं। इसके बनाने में अनेक तरह के धातु–सोना, चांदी, तांबा, पीतल, कांस्य, कागज की लुगदी (पेपरमैसी), बांस की बत्ती, रबर, प्लास्टर ऑफ पेरिस, मिट्टी, आदि काम में लाये जाते हैं। इनसे मानव मुखमुद्रा के मुखौटे तो बनते ही हैं, पशुओं की मुखाकृति भी तैयार की जाती है।

यथार्थ के साथ मौलिकता का सामन्जस्य सभी मुखौटों में होता है। भारत–चीन–जापान आदि देशों में मुखौटे मुँह पर लगाये जाते हैं। किन्तु अमेरिका के रेड इंडियन जाति के लोग बड़े–बड़े मुखौटे कन्धा पर अटका कर बांध लेते हैं। मैक्सिको के कौंगों नदी के कछार में आदिवासी लोग मुखौटे के ऊपर के हिस्से में छेद कर के पीछे तरफ रस्सी से बांध कर नृत्य करते हैं। कुछेक देशों में मुखौटे इस तरह लगाये जाते हैं कि संवाद बोलने के समय वे ऊपर–नीचे हिलते रहते हैं।

मुखौटे की महत्वपूर्ण भूमिका धार्मिक और सामाजिक उत्सव के अवसर पर नृत्य–नाटकों में नजर आती है। जापान में 'नोह' सबसे अधिक प्रसिद्ध मुखौटा नृत्य माना जाता है। जावा, सुमात्रा, बालि आदि की रामलीला में भी मुखौटों का प्रयोग होता है। दक्षिण भारत में कथकली में और छऊ नृत्य में भी मुखौटों का प्रयोग होता है। चीन, जापान, तिब्बत, भूटान, नेपाल आदि बौद्ध देशों में 'सिंह नृत्य' में ऐसे मुखौटे काम में लाये जाते हैं जिनमें कलाकार अपने पूरे शरीर को डालकर नृत्य या अभिनय करते हैं। कुछ पश्चिमी देशों में भी ईस्टर के अवसर पर मुखौटे पहने जाते हैं। यूनान में पूजनोत्सव के समय में रंगीन मुखौटों का उपयोग होता है।

प्राचीन यूनान की रंगशाला बहुत बड़ी होती थी। मंच से दर्शक काफी दूर रहते थे। वैसी हालत में कलाकार बड़े–बड़े मुखौटे पहनकर स्टेज पर उतरने थे ताकि दर्शकों को उनका सही आकार मिल सके। चीन में प्रायः सभी मंदिरों की नाट्यशालाओं में नाटक के मुखौटे काम में लाये जाते थे।

तिब्बत में मुखौटों द्वारा चमत्कारिक और रहस्यपूर्ण नाटक में अपेक्षित वातावरण और प्रभाव की सृष्टि की जाती थी। यह नाट्यशैली दैत्य नृत्य पर हुआ करती थी। ये सभी मुखौटे कागज की लुगदी से तैयार किये जाते थे। प्रेतात्मा, राक्षस, दैत्य, देवता, आदि के मुखौटे विश्व प्रसिद्ध होते थे और आज भी होते हैं।

कभी–कभी ये मुखौटे सजावट के काम में भी आते हैं। भारत में अक्सर नाट्य प्रदर्शन के दरम्यान मुखौटों के उपयोग के पूर्व उनकी पूजा करते हैं। रामलीला के पात्र–जैसे हनुमान, सुग्रीव, जामवंत, बालि, रावण आदि के मुखौटे कलात्मक और सुरूचिपूर्ण ढंग से तैयार किये जाते हैं। अमेरिका के कुछ कलाकार मुखौटे का उपयोग कर जल में विसर्जन कर देते हैं। उन्हें भय होता है कि मुखौटों के रहने से उनके देवी–देवता अनिष्टकर सकते हैं।

आज के प्रयोगवादी नाटकों में मुखौटों का प्रयोग बढ़ गया है। ये मानव के दोहरे चरित्र के अलावा पशु, पक्षी, परी, विदूषक आदि की अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

'बाबू विरंचीलील' नाटक में बायें से चन्द्रमुखी (सविता), भोलेराम (सत्येन्द्र सिन्हा) और विरंचीलाल (राम विलास दास)–1992 ई०

'बहादुर शाह' नाटक में बायें से बेगम ज़ीनत महल (ज्योतिर्मयी) और बहादुरशाह (भगवान प्रसाद)–1972 ई०

'कुंवर सिंह' नाटक में बायें से अमर सिंह (नरेन्द्र सिंह), कुंवर सिंह (भगवान प्रसाद), हरेकृष्ण (विनोद) और रणजीत सिंह (गंगा विष्णु)–1975 ई०

चतुर्भुज - साहित्य

चतुर्भुज रचनावली—खंड एक में संकलित नाटक :—

पाटलिपुत्र का राजकुमार, कलिंग—विजय, सिकन्दर—पोरस, कालसर्पिणी, टीपू सुलतान, रावण, मेघनाद, कंसवध, श्रीकृष्ण, कर्ण, भीष्म—प्रतिज्ञा, बन्द कमरे की आत्मा, नदी का पानी,बाबू विरंचीलाल। कुल—15 नाटक। पृष्ठ संख्या—480। मूल्य—450 रू०

चतुर्भुज रचनावली—खंड दो में संकलित नाटक :—

भगवान बुद्ध, मुद्राराक्षस, अरावली का शेर, नूरजहाँ, शिवाजी, सिराजुद्दौला, मीरकासिम, कृष्ण कुमारी, पीर अली, झांसी की रानी, कुंवर सिंह, मोर्चे पर, बहादुरशाह, कारागार, शाही अमानत। कुल—15 नाटक / पृष्ठ संख्या—480। मूल्य—450 रू०

चतुर्भुज रचनावली—खंड तीन में संकलित नाटक :—

विजय के क्षण, बादल का बेटा, महिषासुर—वध, टूटा दर्पण, रेत की दीवार, उर्वशी, पाटलिपुत्र, बाजीराव—मस्तानी, ताराबाई, मछली पुराण, जहाँआरा, शेरशाह, पहला आदमी, जय—पराजय, महादान, श्री रामवृक्ष बेनीपुरी। 16 नाटक, 24 कहानियाँ, 30 संस्मरण, 41 लेख। पृष्ठ संख्या—491। मूल्य—450 रू०

उपन्यास / कथासंग्रह / इतिहास

हिन्दी :

1. समुद्र का पक्षी (ऐतिहासिक उपन्यास)
2. राजदर्शन (ऐतिहासिक उपन्यास)
3. तथागत (ऐतिहासिक उपन्यास)
4. इतिहास बोल उठा (ऐतिहासिक लेखों का संग्रह)
5. औरंगज़ेब (इतिहास)
6. कमरे की छाया (कथा संग्रह)

अंग्रेजी :

1. Memoirs of William Tayler (Commissioner of Patna in 1857)
2. History of The Great Mughals
3. The Great Historical Dramas
4. The Rani of Jhansi (Drama)

In Press:

1. भारत के बौद्ध विहार
2. भारतीय और विदेशी भाषाओं के नाटकों का इतिहास
3. The Emperor of Lanka (Drama)

सम्पर्क सूत्र :

डॉ० चतुर्भुज, 106, श्रीकृष्ण नगर, रोड—6, पटना—800001

फोन—0612—3209503, मो०—9334525657

Website : www.chaturbhujdrama.com

'शेरशाह' नाटक में बायें से बाबर (चतुर्भुज) और हुमायूँ (भगवान प्रसाद)–1969 ई०

'पाटलिपुत्र का राजकुमार' नाटक में बायें से नायक (अशोक प्रियदर्शी) और कुणाल (विनोद कुमार)

'कुंवर सिंह' नाटक में कुंवर सिंह (भगवान प्रसाद) और कमिश्नर टेलर (चतुर्भुज) –1969 ई०

पाटलिपुत्र सेन्ट्रल को-ऑपरेटिव बैंक लि०
मदनधारी भवन, एस.पी. वर्मा रोड
पटना-800 001

"पाटलिपुत्र गोल्ड एकाउन्ट" पर

सामान्य जमाकर्ता के लिए **9.75%** सूद

वरीय नागरिकों
सहकारी समितियों
सार्वजनिक प्रतिष्ठानों
निजी उपक्रमों के लिए

10% सूद

1. न्यूनतम जमा राशि – 10,000/–
2. अवधि – 1 वर्ष या इससे अधिक
3. त्रैमासिक चक्रवृद्धि दर से सूद का भुगतान
4. 1 वर्ष के पूर्व अपरिपक्व भुगतान पर ब्याज देय नहीं
5. ऋण एवं ओभर ड्राफ्ट की सुविधा
6. अंतिम तिथि – 30.9.2007

बी०एन० झा
प्रबन्ध निदेशक

राज किशोर प्रसाद
अध्यक्ष

जल्दी कीजिए – अधिक लाभ लिजिए

INDIAN INSTITUTE OF HEALTH EDUCATION & RESEARCH

Health Institute Road, Beur, Patna

(Recognised by the Govt. of Bihar, IAP, ISPO and the Rehabilitation Council of India)

Affiliated to the Magadh University, Bodh Gaya

Phone No.. 0612-2253290, 2252999, Fax 0612-2253290 E-mail iihrpatna@vsnl.net / anilsulabh@hotmail.com

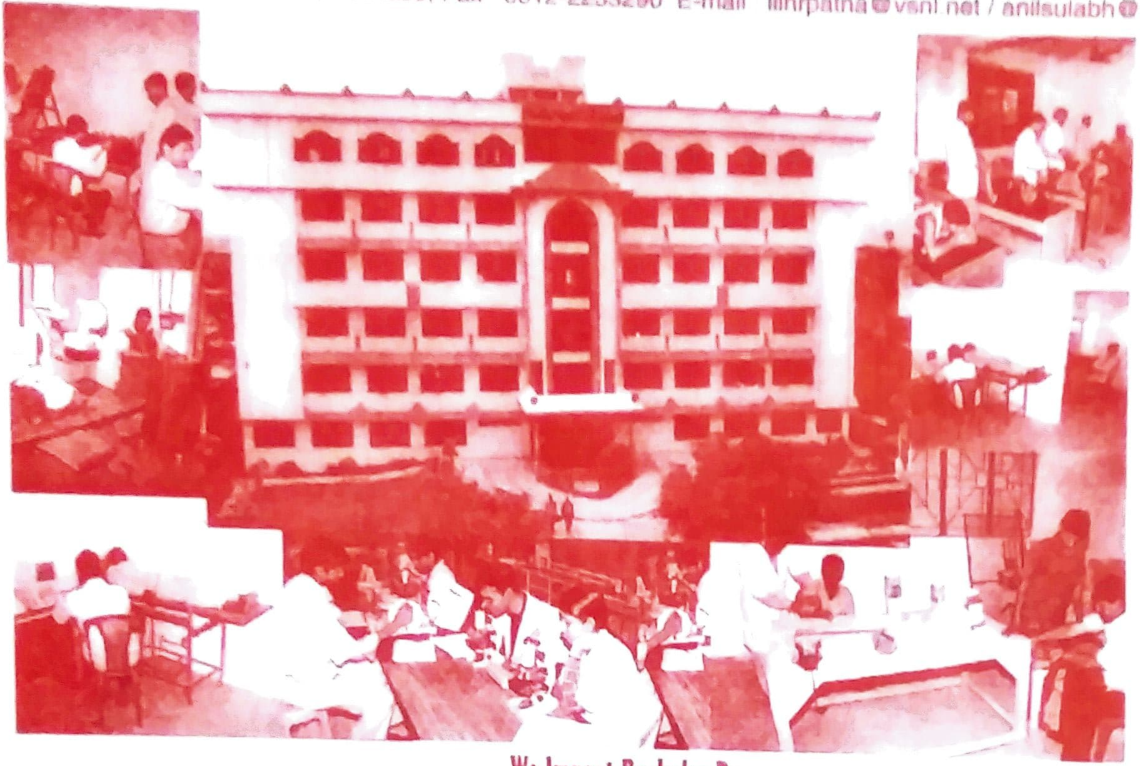

Make haste for admission into following Courses

Admission with Job Guarantee into BPO & BASLP

We Impart Bachelor Degree

BPT (Bachelor of Physiotherapy) **BOT** (Bachelor of Occupational Therapy) **BASLP** (Bachelor of Audiology & Speech Language Pathology) **B.Ed** (Special Education) **BPO** (Bachelor of Prosthetic & Orthotic)

Abridged Degree also for Diploma Holders

We Impart Diplomas

DPT (Diploma in Physiotherapy) **DPO** (Diploma in Prosthetic & Orthotic) **DMLT** (Diploma in Medical Lab. Technology) **DX-RAY** (Diploma in X-Ray Technology) **DHM** (Diploma in Hospital Management)

We Impart Certificates

E.C.G. Technician, O.T. Assistant, Dresser, Foundation Course for Teachers in disability

Dr.K.C. Brahma

Form & Prospectus :

Can be obtained from the office against payment of Rs. 100/- only.
For postal delivery send a DD of Rs. 120/- only in favour of
INDIAN INSTITUTE OF HEALTH EDUCATION & RESEARCH, PATNA

Anil Sulabh